ब्रिटिश शासन काल में जाति विरोधी आंदोलन – पृष्ठभूमि और रणनीति (आर्थिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में विशेष अध्ययन)

डॉ0 सुशील पाण्डेय

जाति व्यवस्था पदानुक्रमित श्रेणी श्रृंखला पर आधारित थी और सामाजिक और न्यायिक विषमता पर आधारित थी। जाति व्यवस्था के मुख्य लक्षण थे, सजातीय विवाह, भोजन पर प्रतिबंध, पेशे के चुनाव में स्वतंत्रता का अभाव।[1] भारत के भाषा क्षेत्र में लगभग 200 समुदाय थे जिन्हें जाति के नाम से जाना जाता था और जिनके अलग–अलग नाम थे। उनमें किसी एक पर भी जन्म होने पर व्यक्ति विशेष की सामाजिक पदवी, प्रतिष्ठा नियत हो जाती थी। यह जातियां लगभग दो हजार उपजातियों में विभक्त थीं। भारतीय जनता के आर्थिक अस्तित्व के अविकसित होने के कारण जाति प्रथा सदियों तक विकसित होती रही और इसके प्रमुख आधार थे गाँवों का स्वशासन, विनिमय सम्बन्धों का अपूर्ण विकास और यातायात के अक्षम और अल्प साधन। भारत पर अंग्रेजी शासन ने जिस नई राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक स्थिति को जन्म दिया और उसके जो परिणाम हुए उससे जाति का आधार कमजोर हो गया और जाति विरोधी सामाजिक आंदोलनों ने जाति व्यवस्था को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।[2]

अंग्रेजों की भारत विजय से जाति का आर्थिक आधार समाप्त हो गया। गाँवों के स्वशासन का समाप्त हो जाना, देशी उद्योगों का समाप्त हो जाना, भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व का विकास सामने आया जिससे नये पेशों का जन्म हुआ आधुनिक शहर बसे जिन्होंने जाति पर आधारित विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया। रेलवे और बसों के विस्तार के कारण सामाजिक गतिशीलता बढ़ी देश के अलग–अलग हिस्सों के लोग एक–दूसरे के सम्पर्क में आये इससे जातियों का पेशागत आधार और इसके सदस्यों के आचार–विचार समाप्त हो गये। भूसम्पत्ति अधिकार बदलने व्यक्तिगत स्वतंत्रता एंव औद्योगिक, वाणिज्यिक, प्रशासनिक जैसे पेशों और व्यवसायों के कारण गाँवों के संयुक्त परिवारों में विकेन्द्रीकरण हुआ। भारत में भूराजस्व के नये बंदोबस्त, भारतीय कृषि का तकनीकी पिछड़ापन और किसानों में बढ़ती ऋणग्रस्तता के कारण शहरों की ओर पलायन शुरू हुआ इससे जाति का पेशागत आधार समाप्त हो गया।[3] जाति पंचायतों को जाति सम्बन्धी नियमों के उल्लंघन के लिये दंड देने का जो अधिकार था उसे ब्रिटिश सरकार ने समाप्त कर दिया और भारत में कानून का शासन प्रारम्भ कर दिया। नये राजनीतिक, आर्थिक बदलावों के कारण जाति पर आधारित पेशे कमजोर पड़ गये। आधुनिक उद्योगों के कारण जिन आधुनिक शहरों का विकास हुआ उनमें बड़े–बड़े होटल, जलपान गृह, थियेटर, ट्राम और बस थे। विभिन्न जातियों के लोग खानपान और शारीरिक सम्पर्क के प्रश्न पर एक–दूसरे के नजदीक आने लगे विभिन्न पेशों या सामाजिक उत्सवों में अन्य जातियों और सम्प्रदायों के सदस्यों से भी सम्बन्ध रखने की आवश्यकता से इस प्रक्रिया को बल मिला। ब्रिटिश सरकार ने जाति की पंचायतों से दंड देने का अधिकार अपने हाथ में लिया और 1860 में भारतीय दंड संहिता बनाई। कास्ट डिजेबिलिटीज रिमूबल ऐक्ट आफ 1850, दि स्पेशल मैरिज ऐक्ट आफ 1872 और स्पेशल मैरिज अमेंडमेंट ऐक्ट आफ 1923 ने भी

जाति व्यवस्था के आधार को कमजोर कर दिया।[4] नयी आर्थिक व्यवस्था के कारण भारत में नये–नये वर्ग सामने आये भारतीय जनता अब पूँजीपति, मजदूर, किसान, मालिक, व्यापारी, खेत–मजदूर, डॉक्टर, वकील जैसे विभिन्न दलों में विभक्त थी, और प्रत्येक दल में विभिन्न जातियों और सम्प्रदायों के लोग थे इस नये विभाजन ने पुराने श्रेणीगत विभाजन को रद्द कर दिया। अब भारत में मिल ओनर्स एसोसिएशन, ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस, आल इंडिया किसान सभा, लैण्ड ओनर्स एसोसिएशन जैसे नये संगठन बने। इससे एक नया दृष्टिकोण, एक नयी चेतना और नयी संघर्ष शक्ति विकसित हुई जिससे जातिगत चेतना कमजोर हुई अब किसान, मजदूर, व्यापारी और मिल मालिक नये–नये वर्ग थे और अब इनकी अखिल भारतीय एकता सामने आई, अब लोगों के आचरण और व्यवहार, चिंतन शैली और आकांक्षाओं में अंतर आया जिससे जाति विरोधी भावनाएँ बढ़ीं। आधुनिक शिक्षा ने भी जाति व्यवस्था को कमजोर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अंग्रेजी शासन से पहले शिक्षा व्यवस्था धर्म से प्रभावित थी चूंकि जाति व्यवस्था को धर्म का समर्थन प्राप्त था इसलिए यह शिक्षा पद्धति लोगों को जाति व्यवस्था स्वीकार करने की शिक्षा देती थी।[5] इससे भारतीय लोग यह समझते थे कि जातीय दैवीय विधान है और इसका उल्लंघन घोर पाप है, ब्रिटिश शासन ने शिक्षा पद्धति को धर्मनिरपेक्ष बनाया अब शिक्षा सबके लिये उपलब्ध थी और पूरी तरह उदारवादी थी। पूर्णतः तार्किक और वैज्ञानिक, कानून के समक्ष समानता, समान अधिकार और अपनी इच्छानुसार पेशा चुनने की स्वतंत्रता को आधुनिक शिक्षा ने बढावा दिया। आधुनिक शिक्षा के प्रभाव से भारत में उदारवादी दर्शन और लोकतांत्रिक संस्थाओं का विकास हुआ। राजाराममोहन राय, देवेन्द्रनाथ टैगोर, केशवचंद्र सेन जैसे प्रबुद्ध भारतीयों ने जाति सुधार को अपने कार्यक्रम का आधार बनाया। भारत में राजनीतिक चेतना के विकास और राजनीतिक आंदोलनों ने जाति व्यवस्था को कमजोर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। भारत में विदेशी शासन के कारण लोगों को राष्ट्रीय आधार पर संगठित होने की आवश्यकता महसूस हुई जिससे संकीर्ण स्थानीय, जातिगत चेतना कमजोर हुई। लिबरल फेडरेशन, इंडियन नेशनल कांग्रेस जैसे संगठनों ने जिन राजनीतिक मूल्यों का विकास किया उसमें जातियों के विशेषाधिकारों के लिये कोई स्थान नहीं था। शिक्षित भारतीयों ने जाति व्यवस्था पर प्रहार किया क्योंकि राष्ट्रीय स्वतंत्रता और देश की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रगति के लिए जाति व्यवस्था का उन्मूलन आवश्यक था जातिगत विशेषाधिकारों के समाप्ति के बाद ही सामाजिक न्याय संभव था।

आधुनिक भारत में जाति विरोधी आंदोलनों ने मुख्यतः पांच रणनीतियों को अपने आंदोलन का आधार बनाया–

1. आधुनिक शिक्षा का विकास – इससे जाति आधारित असमानताएं स्वतः कमजोर पड़ जाएंगीं क्योंकि आधुनिक शिक्षा तार्किक और वैज्ञानिक हैं।

2. आधुनिक कानून – ब्रिटिश शासन द्वारा बनाया गया आधुनिक कानून मुख्यतः दो तत्वों पर आधारित था 1. कानून का शासन 2. कानून के समक्ष समानता। आधुनिक कानून ने जाति के विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया और सामाजिक न्याय को बढ़ावा दिया।

3. संस्कृतिकरण के द्वारा जाति भेद को समाप्त करना – प्रोफेसर एम. एन. श्रीनिवास संस्कृतिकरण को परिभाषित करते हुए कहते हैं – जाति श्रेणीक्रम में ऊपर आने के लिए निचली जातियों द्वारा ऊँची जातियों के सामाजिक एंव धार्मिक व्यवहारों को अपनाये जाना।[6]

4. राजनीतिक अधिकारों की मांग और राजनीतिक सहभागिता।
5. जाति व्यवस्था को अस्वीकार कर देना और इसके विरूद्ध प्रतिक्रियावादी आंदोलन।

आधुनिक भारत में जाति विरोधी आंदोलन इन्हीं पाँच रणनीति पर आधारित थे। राजाराममोहन राय ने हिंदुओं के प्राचीन समाजशास्त्रीय धर्म ग्रंथ 'महानिर्वाण तंत्र' की मदद से यह सिद्ध किया कि अब जाति व्यवस्था की कोई आवश्यकता नहीं है।[7] देवेन्द्रनाथ टैगोर और केशवचंद्र सेन ने जाति व्यवस्था की घोर निन्दा की और आधुनिक शिक्षा को जाति व्यवस्था के उन्मूलन का आधार माना बॉम्बे प्रार्थना समाज और आर्य समाज ने भी जाति विरोधी आंदोलन प्रारम्भ किया आर्य समाज ने सभी जातियों को आधुनिक शिक्षा का अधिकार दिया और उपजातियों के उन्मूलन के द्वारा जाति व्यवस्था में सुधार लाने की बात कही डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने दलितों को आधुनिक शिक्षा देने का विशेष प्रयास किया ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेज एसोसिएशन और ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेज फेडरेशन ने दलितों को आधुनिक शिक्षा दिये जाने को विशेष महत्व दिया। गांधीजी द्वारा 1932 में स्थापित ऑल इंडिया हरिजन सेवक संघ और अन्य संस्थाएँ भी दलित जातियों के लिए व्यापक समाज सुधार सम्बन्धी और शैक्षिक कार्य कर रहे थे संघ ने हरिजनों के लिए कई पाठशालाएँ प्रारम्भ की जिनमें कुछ आवासीय, व्यावसायिक पाठशालाएं भी थीं।[8] ज्योतिबा फुले ने दलितों के लिए कई स्कूलों की स्थापना की।

जाति विरोधी आंदोलनों की दूसरी महत्वपूर्ण रणनीति कानून के द्वारा जाति व्यवस्था का उन्मूलन था। त्रावणकोण, इंदौर, देवास जैसे देशी राज्यों ने राजकीय फरमान द्वारा राज्य के मंदिरों के दरवाजे सभी जातियों के लिए खोल दिये। 1937 में बम्बई की कांग्रेसी सरकार ने बॉम्बे हरिजन टैंपल वर्शिप (रिमूवल ऑफ डिजेबिलिटीज) एक्ट पास किया जिससे दलितों को मंदिरों में प्रवेश मिला।[9] केरल में कई प्रसिद्ध मंदिर प्रवेश आंदोलन हुए जैसे वायकोम (1924–25), गुरूवायूर सत्याग्रह (1931–33), बंगाल में 1929 का मुंशीगंज कालीमंदिर सत्याग्रह, नासिक में 1930–35 का कालाराम मंदिर सत्याग्रह हुए, इसके द्वारा दलितों को मंदिरों में प्रवेश प्राप्त हो गया। डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर ने करीब 15,000 दलितों को लेकर महाड़ में स्थानीय नगरपालिका के नियत्रंण वाले एक सार्वजनिक तालाब से पानी लेने के अधिकार का दावा करते हुए एक विशाल सत्याग्रह किया।[10]

जाति विरोधी आंदोलन की तीसरी प्रमुख रणनीति संस्कृतिकरण थी। बंगाल के नामशूद्रों के एक सम्पन्न तबके ने जिसके अन्तर्गत मुख्यतः भूस्वामी एंव धनी किसान आते थे अपनी जाति के व्यवहारों का संस्कृतिकरण करना शुरू किया और अपने उच्चतर स्तर पर बल दिया। नामशूद्र नेताओं ने ऊँची जातियों के सामाजिक प्राधिकार को चुनौती दी मटुआ सम्प्रदाय के अन्तर्गत सजातीय संगठन का गठन किया गया।[11] नामशूद्र अंग्रेजी राज्य के प्रति निष्ठा व्यक्त करने लगे और इनका विशिष्ट रूप से अलगाववादी रूझान सामने आया, तमिलनाडु में रामनार्ड जिले के नाडारों ने अपनी जीवनशैली का संस्कृतिकरण शुरू किया और अपने आप को उच्च स्तर का क्षत्रिय मानने लगे।[12] त्रावणकोण में निचली इरावा जाति ने भी संस्कृतिकरण को अपनाया महाराष्ट्रा के महारों ने अपने लिये क्षत्रिय पद का दावा किया और 19वीं सदी के अंतिम वर्षों में वे स्वयं को गोपालबाबा वालंगकर के अधीन संगठित करने लगे। महाराष्ट्रा में खेतिहर मराठा जातियों ने भी संस्कृतिकरण की प्रक्रिया द्वारा क्षत्रिय का स्तर प्राप्त कर लिया।

जाति विरोधी आंदोलन की चौथी रणनीति के रूप में दलित जातियों के लिए राजनीतिक सहभागिता और राजनीतिक अधिकारों की मांग शामिल थी। 1910 में क्षत्रपति शाहूजी महाराज की प्रेरणा से महाराष्ट्रा में बहुजन समाज आंदोलन प्रारम्भ हुआ इसका उद्देश्य गैर ब्राह्मणों को राजनीतिक रूप से संगठित करके राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना था क्षत्रपति शाहूजी महाराज ने अपने राज्य कोल्हापुर में सबसे पहले गैर ब्राह्मणों के लिए 50% आरक्षण का प्रावधान किया।[13] 1917 में पी. त्यागराज तथा डॉ0 टी. एम. नैय्यर ने प्रथम गैर ब्राह्मण संस्था दक्षिण भारतीय उदारवादी संघ की स्थापना जिसे बाद में जस्टिस पार्टी कहा गया। इस आंदोलन ने दलितों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व की मांग की। डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर ने 1924 में बहिष्कृत हितकारिणी सभा बनायी और 1934 में इंडिपेन्डेन्ट लेबर पार्टी बनाई, गोलमेज सम्मेलनों में डॉक्टर अम्बेडकर ने दलितों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व की मांग की। डॉ0 अम्बेडकर ने 19 मई 1931 को बम्बई में अखिल भारतीय दलित वर्ग नेता सम्मेलन में औपचारिक प्रस्ताव पास करके एक अल्पमत के रूप में दलितों के अलग निर्वाचक मंडल के अधिकार की गारंटी की मांग की। डॉक्टर अम्बेडकर का मानना था कि राजनीतिक सहभागिता से दलितों की स्थिति मजबूत होगी और जाति व्यवस्था कमजोर होगी।

जाति विरोधी आंदोलनों की पाँचवी प्रवृत्ति थी दक्षिण भारत में गैर ब्राह्मण, अतिवादी और लोकप्रिय आत्मसम्मान आंदोलन, इसका नेतृत्व ई. वी. रामास्वामी नायकर पेरियार ने किया। इस आंदोलन ने ज्योति तास और एम. मसिलमणि जैसे आदि–द्रविड़ बुद्धिजीवियों की रचनाओं से प्रेरणा ली। अपनी पत्रिका कुड़ि–आरसू में नायकर ने दलित द्रविड़ों के लिए स्वतंत्र और सम्प्रभु द्रविड़ गणराज्य की मांग की। ब्राह्मण पुजारियों के बहिष्कार, मनुस्मृति की सामूहिक होली जलाये जाना और दलित जातियों के मंदिर में जबरन घुसने के कार्यक्रम आयोजित किए गये। नायकर की राष्ट्र की धारणा राष्ट्रक्षेत्र के किसी सुनिश्चित भू–भाग से बंधी हुई नहीं थी उनका मानना था कि उत्पीड़ित जनता के लिए एक मुक्तिदायी ढंग से, बराबरी की ओर स्वतंत्र नागरिकता की अर्थात् सामाजिक समानता का ऐसा आंदोलन जो जाति के प्रभुत्व से छुआछूत और लैंगिक भेदभाव से मुक्त हो।[14] आत्मसम्मान आंदोलन जाति व्यवस्था की अस्वीकृति पर आधारित था और इसने जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए परम्परागत हिंदू सामाजिक व्यवस्था को अस्वीकृत किया।

सन्दर्भ

- G. S. Ghurye- Caste and Race in India Page–12
- ए. आर. देसाई– भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि पेज–213
- ए. आर. देसाई– भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि पेज–212
- गजेटियर आफ इण्डिया खंड–1 पेज–37
- इंडियन स्कूल रिफार्म खंड–2 पेज–91
- M.N. Srinivas- Social Change in Modern India–1966
- फिलासफी आफ ब्रह्माइज्म पेज– 330
- S-G Malik- Dissent Protest, and Reforms in Indian Civilization Page-34
- ए. आर. देसाई– भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि पेज–205
- पलासी से विभाजन तक और उसके बाद– शेखर बंद्योपाध्याय पेज–348

- Sekhar Bandyopadhyay- Bengal 1872-1937 Caste Politics and Raj Page-48
- Robert L. Hrdgrave-The Nadars of Tamilnadu- The Political Culture of a Community in Change Page-17
- Annihilation of Caste-Dr.B.R.Ambedker 1936
- गीता और राजादुरई –1998 पेज–514

Copyright © 2014. Dr. Sushil Pandey. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.